International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
Received: 25-07-2020; Accepted: 10-08-2020; Published: 26-08-2020
www.educationjournal.org
Volume 5; Issue 4; 2020; Page No. 49-51

वर्तमान सन्दर्भ में दिवाकर के साहित्य की प्रासंगिकता

बलराम कुमार
अंशकालीन प्राध्यापक, हिन्दी–विभाग, डॉ. लोहिया कर्पूरी विशेश्वरदास महाविद्यालय, ताजपुर, समस्तीपुर, बिहार, भारत

सारांश
रामधारी सिंह दिवाकर बदलते गाँव के समर्थ कथाशिल्पी हैं। ग्रामीण जीवन की सूक्ष्म से सूक्ष्म संवेदना को अभिव्यक्त करने का अद्भुत कौशल और माटी की गंध से भरी इनकी तरल पारदर्शी भाषा विस्मित–विमुग्ध करती है। कथाभूमि और परिवेश की गहरी पकड़ तथा संलग्नता दिवाकर जी को अन्य कथाकारों से पृथक और विशिष्ट बनाती है।

मूल शब्दः प्रासंगिकता, रामधारी, ग्रामीण, कथाभूमि

प्रस्तावना

रामधारी सिंह दिवाकर की कहानियाँ गाँव के अन्तः राग–विराग, टूटन और सामूहिक जीवन के क्रमशः छीजते जाने की पीड़ा को पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में पूरी हार्दिकता और मार्मिकता से रूपायित करती हैं। अपराधीकरण, गाँव के नगरीकरण और सांस्कृतिक प्रदूषण के विषाणुओं से ग्रस्त आज के अधिसंख्य गाँवों की स्पष्ट आहट दिवाकर की कहानियों में साफ–साफ महसूस की जा सकती है।

रामधारी सिंह दिवाकर की कहानियों में सामाजिक परिदृश्य का संचित चित्रण प्रमाणिकता के साथ हुआ है। दिवाकर भारतीय संवेदना के सामाजिक कथाकार हैं। ग्रामीण जीवन की सूक्ष्म से सूक्ष्म गति–विधियों पर उनकी पैनी–दृष्टि रही है। कहानी समाज के किसी एक तबके या क्षेत्र को लेकर नहीं चली है, बल्कि गाँव के विभिन्न वर्गों, समुदायों, जातियों एवं उच्च–निम्न की भावना से ग्रसित सामंतवादी, पूँजीवादी एवं अभिजात्यवादी आदि सभी के क्रिया–कलापों पर नजर बनाये दिवाकर की कहानी बदलते ग्रामीण जीवन का यथार्थ दस्तावेज है।

दिवाकर की कहानियों में आज के गाँव के चरित्रहीन पतनोन्मुख समाज के भयावह यथार्थ की तस्वीरें हैं। इसमें समकालीन जीवन की विसंगतियाँ हैं, विडम्बनाएँ हैं, विकृतियाँ हैं, क्षरित होते मानव मूल्य हैं, टूटती परम्पराएँ हैं, व्यवस्था के विरोध में उठते हाथ हैं और इस सबसे अलग ग्राम्य जीवन की संवेदना और धड़कने हैं।

दिवाकर मूलतः ग्रामीण परिवेश से जुड़े और ग्रामीण संस्कृति में ढले सचेतन कथाकार हैं। इसलिए उनकी कहानियों में ग्रामीण मिट्टी की सौंधी गंध के साथ शहरी संस्कृति की चलती तस्वीर भी सहज ही द्रष्टव्य है। कुल मिलाकर सामाजिक जीवन–संघर्ष के कथाकार रामधारी सिंह दिवाकर बिहार के बदले ग्रामीण स्वरूप का चित्रण सरल और सहज तरीके से करते हैं। 'नवोदय' शीर्षक कहानी में ग्रामीण समाज में भूपतियों की गिरती सामाजिक, नैतिक और सर्वोपरि आर्थिक स्थिति के साथ ही निम्नवर्ग की सुधरती सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था से हो रहे समाज के मानसिक परिवर्तन का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किया गया है।

जमींदार परिवार में बाबू जी और 'मैं' टूटती आर्थिक स्थिति के बीच आज वहाँ खड़ा दिखता है जहाँ उसे जमींदार परिवार का अपने आप को स्वीकार करने में शर्म का एहसास होता है, तो दूसरी ओर निम्न जाति के खबास टोले के झौली मड़र का बेटा चूंकि उच्च पद पर आसीन है तो कल का झौलिया खबास आज झौली मड़र हो चला है। झौली मड़र के प्रति 'बाबू जी' के ये शब्द टूटती हुई जमींदारी प्रथा की कसक को अभिव्यक्त करते हैं। ''अब तो तुम्हीं लोगों का राज है मड़र। बेटा राम सजीवन भी हकीम हो गया। पक्का मकान बना ही चुके। जमीन पर जमीन खरीद रहे हो। क्या कमी है तुम्हें। हमलोग तो अपनी इज्जत बचाने में ही मर रहे हैं, क्या हुआ जमींदारी चली गई, लेकिन आदत तो वही है। अब राड़ सोलकन की तरह तो जी नहीं सकते हमलोग।''[1] और वही बाबूजी शराब के नशे में बकने लगते हैं– ''क्या समझते हो तुम। जमींदार परिवार का राजपूत हूँ, कोई राड़ सोलकन नहीं हूँ समझे.? तुम बराबरी करोगे मेरी? तो उस पर राम संजीवन का जो पलटवार है, वह आज का सत्य है। ''यह बुढ़वा राजपूतवा अल्ल–बल्ल बकता है। भिखारी बन रहा है न, इसलिए भड़ास निकाल रहा है।''[2]

इस प्रकार समाज के बदले स्वरूप एवं वहाँ की वास्तविक स्थिति का छाया–अंकन दिवाकर करते हैं। सामाजिक स्तर पर बदलते विभिन्न वर्गों की वर्तमान स्थिति की तुलनात्मक प्रस्तुति दिवाकर की कहानियाँ करती हैं। दिवाकर की प्रत्येक रचनाओं में पात्रों का सरल होना उनके मधुर स्वभाव में गाँव के प्रति मीठे लगाव को दर्शाता है।

सामाजिक स्तर पर ग्रामीण जीवन शैली, आत्मीयता, भरपूर लगाव एवं मातृत्व के अनोखे प्यार का सजीव वर्णन है। दिवाकर की कहानियों में देहात अथवा गाँव की पीड़ा है, और शहरी हो गए ग्रामीणों की स्वार्थलोलुपता, अनैतिकता भी किस तरह गाँव को गाँव नहीं रहने देती, इस त्रासदी को यहाँ चित्रित प्रमाणिकता के साथ किया गया है। ग्रामीण जीवन और मध्यवर्गीय आम आदमी से जुड़ी हुई कहानियाँ जहाँ ग्रामीण जीवन शैली में आये बदलाव से पाठकों को रू–ब–रू कराती है, वहीं गाँव से कटकर शहर में रहने के दर्द का एहसास भी कराती है। शहरी चकाचौंध में माता–पिता की उपेक्षा और गाँव–गंवई में नष्ट होते प्राचीन जीवन मूल्य के चित्र भी पाठकों को झकझोरते हैं। दिवाकर की अधिकांश कहानियाँ भारतीय ग्रामीण परिवेश से जुड़कर ग्रामीण जीवन की तह तक पहुँचती हैं तथा पुराने जीवन मूल्यों को चित्रित करते हुए वर्तमान समय में उनमें आयी गिरावट को भी सशक्त ढंग से उद्घाटित करती हैं।

ग्रामीण परिवेश एवं ठेठ ग्रामीण जीवन के इस स्वरूप को देखा जा

सकता है– ''आज भोरे–भोर दमयंती आयी और नंदिनी को अपने घर ले गई। एक्को घड़ी छोड़ती है दमयंती नंदिनी को? मेरे साथ चलती हुई माँ भुनभुनाती रही रास्ते भर, जाने कौन वशीकरण मन्तर जानती है ई दमयंती। जबसे मेरी पोती आयी है, उसी के साथ डोलती रहती है। निश्चिंत होकर बतिया भी नहीं पायी हूँ अपनी पोती से।... बेचारी नंदिनी। कैसे कठकरेज होगी, ऊ मनहारी जो फूल अइसन बेटी को तियाग कर दूसरे मरद के घर बैठ गई।''(3)

''तू असली मउगमेहर है रे, सहदेव! जा अपनी मेहरारू के अंचल मुँह झापकर सो जा।... गरब करने की बात कैसे नहीं है रे? सुराजो क्या चोरी–छिनारी में गई थी जेहल? अरे, बनिहार–बनिहारिन के इज्जत–पानी के लिए लड़ाई लड़ी उसने। जेहल हुई उसको। किसको गरब नहीं होगा इस पर। बुढ़उ अइसहीं खुशी से पागल नहीं है।''(4)

ग्रामीण जीवन शैली भाषा और गंवई के असली स्वरूप को दिवाकर की लेखनी प्रतिपादित करती है। स्वाभाविक रूप से गाँव में शहर के प्रवेश एवं अन्तःसम्बन्ध के कारण अन्य चीजों के साथ–साथ ग्रामीण भाषा–संवेदना व शिल्प पर भी इनका प्रभाव व अुनभव स्वभाविक है। कथाकार अपनी कहानियों में इस परिवर्तनों को चित्रित करते हुए पात्रों की भाषा से आये सवंदेना व बदलाव को भी स्वतः ही उकेरते चलते हैं।

ग्रामीण जीवन की सूक्ष्म संवेदना, चाहे वह किसी भी क्षेत्र की किसी भी स्थिति में जन्म लें। समस्त जीवन शैली का मूल निचोड़, गाँव के सामान्य जीवन संघर्ष और परिवेश में है। दिवाकर ने अपनी लेखनी के जरिए गाँव की विशेषता और महत्ता का अद्वितीय परिचय दिया है।

आंचलिक रंग–राग दिवाकर की कहानियों में यत्र–तत्र बिखरे पड़े हैं। खासकर 'मखान पोखर' कहानी संग्रह की अधिकांश कहानियों में मिथिलांचल अपनी पूरी गरिमा के साथ मौजूद है और इतने विस्तार बहुआयामी स्वरूप में मौजूद है कि इस आधार पर मिथिलांचल की सांस्कृतिक गाथा से हम परिचित होते चलते हैं।

कहानियों में गुजरते हुए मिथिलांचल की सांस्कृतिक परम्पराएँ, लोकगाथाएँ, लोक गीतों के साथ वहाँ हो रहे दैनंदिनी सामाजिक परिवर्तनों से भी भाषा के कलात्मक प्रयोग से संवेदना दृष्टिगोचर होती है।

''अरे राजपूत हूँ। सिंह कभी घास नहीं खाता।'' उसके जवाब में रामसजीवन की यह भाषा कितनी बदली हुई है– ''ई राजपुतवा अपने वश में नहीं है। आखिर जमीन बेची है न इसने। भिखारी बन रहा है। इसलिए बड़बड़ा रहा है।''(5)

रामधारी सिंह दिवाकर अपने समकालीन कथाकारों में सबसे नजदीक गाँव की संस्कृति, परम्पराएँ एवं वहाँ के क्रियाकलापों से जुड़े हैं। और जुड़ना कैसा उनका बचपन ही गाँव में गुजरा। जब चौबीस पचीस की अवस्था में नौकरी मिली तबसे उनका गाँव धीरे–धीरे पीछे छूटता चला गया, परन्तु आत्मीय संबंध–संलग्नता एवं जुड़ाव कभी कमा नहीं, अपितु दिनोंदिन बढ़ता ही चला गया। शहर और गाँव दोनों की सांस्कृतिक झलक, खूबियां और कमियाँ सभी ज्वलंत स्थिति को दिवाकर ने अपनी कहानियों और उपन्यासों का विषय बनाया। ग्रामीण जीवन की सूक्ष्म संवेदना को, साहित्य पटल पर रखते नहीं थकते। उनका आत्मीय सम्बन्ध उनकी आत्मा से जुड़ी हुई है। गाँव और शहर के तुलनात्मक अध्ययन में निकली, संवेदनाओं पर दिवाकर की पैनी दृष्टि कभी ओझल नहीं हुई। पाठकों के ह्रदय को झकझोरती और ग्रामीण जीवन से जोड़ती मानवीय सम्बन्धों का अद्वितीय परिचय दिवाकर की कहानियाँ कराती हैं। दिवाकर ग्रामीण संवेदना के कथाशिल्पकार हैं। ग्रामीण वातावरण व परिवेश की खूबियों को बताने वाले हैं। अच्छाइयों, सच्चाइयों और मानवतावादी दृष्टि के पक्षधर हैं। दिवाकर भारतीय कथाकारों में अद्वितीय निधि हैं। इसकी विशेषता–दिवाकर की कहानियों में देखी व परखी जा सकती है।

''वे गुनाह करते हैं, परन्तु उनका गुनाह भी विवशता का दूसरा नाम है, पाप के कड़वेपन से पाक। उनके पाप में भी सादा लौ ही टपकती है, उन्हें पाप करते देखकर क्रोध के बदले दया आती है।''(6)

''उस अभागे को अब अगर किसी विचार से संतोष होना था तो वह यह था कि यह मेरे पूर्वजन्म का संस्कार है।''(7)

प्रेमचंद के ग्रामीण परिवेश पर लिखी कहानियों में किसान के खेतिहर से मजदूर बनने की लाचारी के अनेकशः उदाहरण प्राप्त होते है। प्रेमचंद अपने मूल जीवन में खुद प्रेम के भूखे थे। कर्मभूमि उपन्यास मे अमरकांत प्रेमचंद का प्रतिनिधित्व करने वाला पात्र है। प्रेम की तलाश में भटकता युवक और कोई नहीं प्रेमचंद खुद हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विभिन्न संघर्ष, गरीबी, लाचारी, बेकारी एवं शोषण के समाज को प्रेमचंद ने खुद जीया है। स्थिति का करुणार्द स्वयं के जीवन से साक्षात्कार करना है। प्रेमचंद की भांति दिवाकर का व्यक्तिगत जीवन भी लाचारी और शोषित समाज में व्यतीत हुआ। वह मूक दर्शक होकर अपने अनुभवों में हमेशा सहेजते रहे। उन्होंने समाज के विकृत रूप को नजदीक से जीया, उसे भोगा और जब पढ़–लिखकर चेतना का विकास हुआ तब समय आने पर उसे कहानियों के माध्यम से साहित्य पटल पर प्रस्तुत भी किया। कलात्मकता के साथ शिल्प की सजावट को प्रस्तुत किया। इनकी कहानी बदले गाँव का सुंदर स्वरूप है, जो देखने में तो गाँव जैसा है परन्तु सोच–विचार शहर जैसा बनता जा रहा है। प्रेम आपस में टूट रहे हैं। भाइचारे और शिष्टाचार का समापन होता जा रहा है। जीवन के सभी क्षेत्रों में मूल्यहीन नैतिकहीनता एवं संस्कारगत ढाँचा कमजोर दिख रहा है।

रामधारी सिंह दिवाकर आठवें दशक के कथाकारों में उल्लेखनीय हैं। इस दशक की कहानियों में मूल्य–चिंता, विसंगति और विडम्बना का ही एहसास नहीं है, उन्हें सामाजिक यथार्थ के ज्वलन्त प्रश्नों से जोड़कर आत्म–संघर्ष और सामाजिक संघर्ष की प्रक्रियाओं से गुजरते हुए निर्णयात्मक बिन्दुओं तक ले जाने का प्रयत्न भी किया गया है।

आठवें दशक की कहानी ने व्यक्ति, समाज, राजनीति, अर्थतंत्र के अनेक पक्षों का उद्घाटन किया है, जिसका मुख्य आधार–सामाजिक चेतना है। इसमें प्रमुखतः समय के साथ सत्य की अभिव्यक्ति हुई है। आत्म केन्द्रित पात्रों की प्रस्तुति और समसामयिक समस्याओं से आँखें चुराने की प्रवृत्ति के बजाय इसमें आज की विसंगतियों का उद्घाटन किया गया है। साथ ही व्यक्ति की पीड़ा को मूर्त करने के साथ–साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष टकराव की स्थितियों को स्वर दिया गया है। इस दशक की हिन्दी कहानियों में मानवों के मनमस्तिष्क का चित्रण किया गया है। मानवीय अहं या स्व की विशुद्ध या यर्थार्थ अभिव्यक्ति के प्रति भी यह कहानियाँ आस्थावान रही हैं। परिस्थिति जन्य वैयक्तिक दुःख–सुख को स्वरूपतः अभिव्यक्त करके भी इस युग की कहानियाँ दुःखाभिव्यक्ति के प्रति ज्यादा सजग और सचेतन दिख पड़ती है। व्यक्ति सहानुभूति इस युग की कहानियों में सामाजिक स्तर पर मिलता है। व्यक्ति चेतना का विकास सामाजिक धरातल पर भी हुआ है। स्वानुभूति या वैयक्तिक सत्य की संगति समयानुभूति या सामाजिक सत्य से करने के प्रति इस युग के कहानीकारों का प्रयास सराहनीय है। सामाजिक यथार्थ का प्रतिफलन वैयक्तिक मनोभूमि पर होकर सहृदय के बीच जिस प्रभावन्विति को प्रकट करता है उसका प्रतिनिधित्व इस काल की कहानियाँ करती हैं– इस सत्य को अस्वीकारा नहीं जा सकता।

जिन कहानियों में इन दो स्थितियों का समन्वय नहीं हो पाया है, वहीं रस–भंग की स्थिति उत्पन्न हो गई है। सच्चा कहानीकार नितान्त यथार्थवादी नहीं हो सकता है। मानवीय संवेदनाओं या आकांक्षाओं के धरातल पर यथार्थ को अवस्थित करके भी आदर्श के प्रति अपना पूर्ण विश्वास प्रकट करता है। मस्तिष्क और हृदय दोनों के बीच एक सूत्रता या सामंजस्य की स्थिति लाना ही साहित्यिक रचना की मौलिक विशेषता है। इसी के आधार पर प्रभाव क्षमता और शाश्वतता की व्याख्या की जा सकती है। इस दशक के प्रतिभा सम्पन्न कहानीकारों ने इस दिशा में प्रयत्न किया है। हृदयहीन, असंतुलित, स्वार्थी और असंस्कृत कहानीकारों की कहानियाँ इस दिशा में उपहासास्पद ही सिद्ध हुई हैं। इसी प्रकार वेदना की संप्रेषणीयता के आधार पर कहानियों का विभाजन किया जा सकता है।

निष्कर्षत

कहा जा सकता है कि प्रेमचंदोत्तर कहानीकारों द्वारा प्रस्तुत ग्रामीण कहानियों में अपने–अपने अंचल या जनपद के लोक–जीवन को कहानी में लाने की प्रवृत्ति विद्यमान है। इन कहानियों में ताजगी है और प्रेमचंद की गाँवों पर लिखी कहानियों से एक हद तक नवीतम भी।

हिन्दी साहित्य में कुल मिलाकर आंचलिकता का गहरा संबंध व्यतीत या बीतती हुई स्थितियों से है। व्यतीत या बीतती हुई की मार्मिकता–यह आंचलिक भाव–भूमि का केन्द्र है। वैसे तो लोक जीवन की चर्चा कहानियों में पहले से थी, लेकिन लोक जीवन की मार्मिकता की तीव्रता का अनुभव साहित्य में तब आया जब लोक–जीवन परिवर्तित होने लगा। यह परिवर्तन इतने वेग और इनते व्यापक तौर पर स्वतंत्रता से पूर्व नहीं घटित हो रहा था। भारतीय जीवन में शाश्वत सनातनता आदि भी बद्धमूल धारणा बहुत कुछ मध्यकालीन सामाजिक ढांचे की दीर्घ व्यापी अपरिवर्तनशीलता के कारण ही युद्ध राजवंशों में हेर–फेर, वर्ग सम्बन्धों को नहीं बदलते थे। ये सब किसी दुर्घटना की भांति होते थे – वहाँ भी राजधानी या व्यापार केन्द्रों में विशाल ग्रामीण क्षेत्र में ये घटनाएँ लोक–वार्ता के रूप में पहुँचती थी। सब कुछ जस का तस ही रहता था।

संदर्भ सूची

1. नवोदयः वर्णाश्रम, दिवाकर, पृ०– 127
2. वहीः ’’ , ’’ , पृ०– 129
3. पुनरागमन : मखान पोखर, दिवाकर, पृ०– 10
4. वहीः ’’ , ’’ पृ०– 11
5. नवोदयः मखान पोखर– दिवाकर, पृ०– 134
6. प्रेमचंद और देहात : उपेन्द्रनाथ अश्क, पृ०– 196–90
7. सरोवर गेहूँः मान सरोवर, भाग– 4, पृ०– 194 – प्रेमचंद